M.A II - Sem IV

वारेन हेस्टिंग्स के बाद अंग्रेज शासकों ने भू राजस्व के लिए मुख्य रूप से तीन पद्धतियाँ चलाई — स्थायी बंदोबस्त प्रणाली, रैयतवारी पद्धति और महलवारी पद्धति।

~~स्थाई~~ स्थायी बंदोबस्त पद्धति

लार्ड कार्नवालिस ने स्थायी बंदोबस्त की प्रणाली प्रारम्भ की और इसे बंगाल में कार्यान्वित किया। कार्नवालिस को संचालकों द्वारा यह आदेश मिला कि वह ऐसा प्रबन्ध करे जिससे कंपनी को लाभ हो, भारत के किसानों को भी प्रसन्नता मिले और भू-पतियों को भी सुरक्षा हो। भारत पहुँचते ही लार्ड कार्नवालिस ने भूमि विषयक ~~दस्तूरों~~ दस्तूरों, पट्टों और लगानों के सम्बन्ध में जाँच-पड़ताल के आदेश दे दिए।

सर जान शोर ने उनकी बड़ी मदद की उन्होंने 1789 ई० में एक विस्तृत पत्र तैयार किया जिसमें प्रस्तावित व्यवस्था के स्वभाव आदि का विवरण दिया गया था। उन्होंने जमींदार वर्ग को विरासत के आधार पर भू-स्वामी बनाने की आवश्यकता को उचित बताया। इसी स्थाई वर्ग के माध्यम से वे 'सरकार के लिए निश्चित राजस्व और प्रजा की सुरक्षा' का लक्ष्य प्राप्त करना चाहते थे।

22 मार्च ______ को कार्नवालिस ने एक अध्यादेश से स्थाई व्यवस्था लागू किये जाने की घोषणा की ~~अब~~ चूंकि ज़मीन का लगान हमेशा के लिए निश्चित किया जाना था इसलिए इसकी राशि बहुत अधिक रखी गई।

बन्दोबस्त योजना से निम्नलिखित लाभ की सम्भावनाएं थीं —

(1) भूमि से प्राप्त होने वाली लगान की राशि निश्चित रूप से निर्धारित हो जाएगी और कंपनी के अधिकारियों को अन्य क्षेत्रों की ओर ध्यान देने के लिए समय मिल जाएगा। लगान चुकाने वाले भी वार्षिक बढ़ोतरी और कमी की चिंता से मुक्त हो जाएंगे।

(2) राजस्व वृद्धि की चिन्ता न होने पर जमींदार कृषि उत्पादन वृद्धि के लिए चिन्तित रहेंगे इससे कृषि योग्य भूमि का विस्तार करेंगे इससे बंगाल का निर्यात व्यापार बढ़ेगा और व्यापार में समृद्धि और सम्पन्नता आएगी।

(3) अंग्रेजों के लिए लाभ यह था कि इससे धन-निष्कासन में सहायता मिलने वाली थी और इंग्लैंड ही इससे लाभान्वित होता।

स्थायी बन्दोबस्त को लागू करने से पहले गहन वाद-विवाद हुए। वाद-विवाद में राजस्व बोर्ड के अध्यक्ष सर जॉन शोर तथा अभिलेख पाल (रिकार्ड कीपर) जेम्स ग्रान्ट सम्मिलित थे।

भूमि व्यवस्था से सम्बन्धित तीन प्रश्न थे : समझौता किसके साथ किया जाए — जमींदारों के साथ या किसानों के साथ? भूमि उपज में सरकार के राजस्व का कितना भाग हो? और समझौता की अवधि कुछ वर्षों के लिए हो या स्थायी हो? इन प्रश्नों पर लार्ड कार्नवालिस, सर जॉन शोर और ग्रांट के मध्य वाद-विवाद हुआ और अन्त में

निर्णय लिया गया।

सर्वप्रथम प्रथम प्रश्न पर विचार किया गया कि जमींदारों को राजस्व के संग्रह की जिम्मेदारी दी जाए या उसे भूमि का स्वामी बना दिया जाए।

सर जॉन शोर का विचार था कि भूमि के स्वामी जमींदार हैं और राज्य केवल उनसे राजस्व का कुछ भाग मात्र प्राप्त कर सकता है। उनका यह भी कहना था कि जमींदार अपनी सारी भूमि को पर अपना अधिकार सुरक्षित रख अपनी संतान को दे सकते हैं और उसे बेच सकते हैं।

ग्रांट का विचार इससे भिन्न था। उसका विचार था कि भूमि पर राज्य का अधिकार है और राज्य की ओर से जमींदार केवल भूमिकर के संग्रहकर्ता हैं। अतः सरकार जब चाहे तब उन्हें हटा सकती है। इसलिए सरकार जमींदारों या किसानों में से किसी से भी समझौता कर सकती है।

कार्नवालिस स्वयं इंग्लैंड का जमींदार था इसलिए वह सर जॉन शोर के विचारों से सहमत था। इसके अतिरिक्त कंपनी के अधिकारियों के पास न तो प्रशासनिक क्षमता और अनुभव थे और न वे किसानों से व्यवस्था को अच्छी तरह जोड़ सकते थे। अतः कार्नवालिस ने जमींदारों से ही समझौता करने का निर्णय लिया।

दूसरा प्रश्न था कि भूमि कर कितना हो और इसके निर्धारण का आधार क्या हो?

ग्रांट का विचार था कि लगान को निश्चित करने का आधार भूमि की

पैदावार ही हो सकता है क्योंकि 1765 ई० के बाद से कंपनी ने पैदावार के आधार लगान प्राप्त नहीं किया है, इसलिए लगान निश्चित करने का आधार 1765 ई० में हुई पैदावार और वसूल किया गया लगान होना चाहिए।

किन्तु सर जॉन शोर इस विचार को स्वीकार नहीं करता था। उसका विचार था कि लगान को निश्चित करने का एकमात्र आधार तत्कालीन वर्षों में एकत्र किया गया लगान ही हो सकता है। अन्त में लार्ड कार्नवालिस ने इस विषय में शोर के मत का ही समर्थन किया और स्थायी बन्दोबस्त 1790-91 में वसूल किए गए लगान के आधार पर स्वीकार किया गया अर्थात् 2,68,00,000 रु० को ही आधार स्वीकार किया गया।

अंतिम प्रश्न था बन्दोबस्त के समय का। यह स्थायी हो या अस्थायी। ग्रांट और शोर यह दोनों चाहते थे कि बन्दोबस्त स्थायी न होकर अस्थायी अर्थात कुछ वर्षों के लिए हो।

शोर का विचार था कि भू-सम्पत्तियों का सर्वेक्षण तथा उनकी सीमाओं का निर्धारण नहीं हुआ था। अतएव यह व्यवस्था दस वर्ष के लिए होनी चाहिए।

किंतु लार्ड कार्नवालिस का विचार भिन्न था। वह स्थायी बन्दोबस्त का समर्थक था। उसका कहना था कि दस वर्ष का समय इतना थोड़ा है कि कोई भी जमींदार भूमि में स्थाई सुधार करने का प्रयत्न नहीं करेगा।

कार्नवालिस के मत का समर्थन इंग्लैंड के प्रधानमंत्री पिट और नियंत्रक मंडल के अध्यक्ष डंडास ने किया।

अपने निर्णय तथा विचार को कार्नवालिस ने क्रियान्वित में लागू किया। सन 1790 ई० में जमींदारों के साथ एक दस वर्षीय समझौता किया गया और इंगलैंड के संचालकों की स्वीकृति पत्र आ जाने पर 1793 ई० में इस व्यवस्था को स्थायी बना दिया गया।

यह निश्चित किया गया कि जमींदार और उनके उत्तराधिकारी भूमि के लगान का 8/9 भाग कंपनी को देंगे और 1/9 भाग अपनी सेवाओं के लिए अपने पास रखेंगे।

बंगाल में जमींदारों के ऐसे चार वर्ग थे जिनके साथ 1793 ई० में लगान का स्थायी बंदोबस्त किया गया था। उनमें से एक तो कूच बिहार, असम और त्रिपुरा के राजाओं जैसे वे मूलतः स्वतंत्र सरदार थे जो मुगल सम्राटों को नजराने के रूप में लगान देकर अपने-अपने इलाकों में कब्जा जमाए बैठे थे; दूसरे राजशाही, बर्दवान, दिनाजपुर आदि के राजाओं जैसे वे पुराने जमींदार परिवार थे जो स्वतंत्र सरकारों की भाँति सम्राट को निश्चित भूमिकर देते थे; तीसरे वे लगान संग्राहक थे जिन्हें मुगल सरकार ने लगान वसूल करने का अधिकार दिया था और कई पीढ़ियों के उपरांत जिनका ओहदा पुश्तैनी हो गया था; और चौथे वे किसान थे जिन्हें ईस्ट इंडिया कंपनी को दीवानी के अधिकार प्राप्त हो जाने के बाद से लगान वसूल करने के काम का भार सौंपा गया था तथा जिन्हें सामान्यतः जमींदार कहकर पुकारा जाने लगा था। इस वर्ग में न केवल कलकत्ते के बहुतेरे बनिये थे जिन्होंने देय लगान की खुलेआम बोली देकर

जमींदारी प्राप्त कर ली थी कलि. कंपनी में काम करने वाले ऐसे बहुत से बेनामी पट्टेदार भी थे जिन्होंने अधिकारियों तथा भारतीय कर्मचारियों के नाम से जमीनें ले रखी थीं।

आज की भूमि के तीन भागीदार थे: सरकार, बिचौलिए (जमींदार) और काश्तकार (रैयत)।

स्थायी व्यवस्था ने पहले दो भागीदारों की स्थिति निश्चित कर दी और भूमि की उपज में सरकार का भाग हमेशा के लिए निर्धारित कर दिया गया। इससे आशा के अनुरूप ही सरकार को अधिकतम लाभ हुआ। जहाँ तक इस व्यवस्था के आर्थिक स्वरूप का प्रश्न था, इसके अनुसार इतना अधिक भू-राजस्व निर्धारित किया गया था जितना पहले कभी नहीं हुआ था।

भूमि के लगान में सरकार का भाग 89% निर्धारित किया गया जिसका परिणाम यह हुआ कि जमींदार के पास राजस्व संग्रह से सम्बद्ध कार्यों के लिए केवल 11% ही बाकी रहा। इस प्रकार अपनी आय में होने वाली चिंताजनक घट बढ़ से सरकार मुक्त हो गई और उसकी वाणिज्यिक और प्रशासनिक आवश्यकताओं - निवेश, भुगतान और सरकारी व्यय की पूर्ति के लिए पर्याप्त आय सुनिश्चित हो गई।

इतिहासकारों ने स्थायी बन्दोबस्त के पक्ष - विपक्ष में कड़ी समीक्षा प्रस्तुत की है।

सर्वप्रथम स्थायी समाधान ने जमींदारों को भूमि के स्वामी के रूप में मान्यता दी और उनके बच्चों तथा कानूनी उत्तराधिकारियों को उनकी मृत्यु के बाद उस भूमि के

Scanned with CamScanner

स्वामी बनने का अधिकार भी दिया। उन जमींदारों को अपनी जमीन को दूसरे के नाम करने, बेचने तथा रेहन रखने का भी अधिकार था। लेकिन यह भी व्यवस्था की गई कि अगर वे सरकारी खजाने में एक निश्चित तिथि तक लगान जमा नहीं कर पाते तो उनके सभी अधिकार समाप्त हो जाएंगे। स्थायी समाधान में हमेशा के लिए वह राशि निर्धारित की गई जो सरकार को जमींदार से प्राप्त होनी थी।

जमींदारों को यह जिम्मेवारी सौंपी गई कि वे पट्टे पर जमीन लेने वालों के अधिकारों की रक्षा करेंगे और पट्टे में स्पष्ट रूप से बताया जाएगा कि जमीन कितनी दी गई है और उस पर कितनी राशि ली जाएगी। लेकिन अस्पष्ट शब्दों में यह भी कहा गया कि इस व्यवस्था के अन्तर्गत जमींदारों पर वे नियम और कानून लागू होंगे जो ब्रिटिश सरकार पट्टेदारों के पट्टे की अवधि के दौरान उनके अधिकारों और सुविधाओं की रक्षा के लिए तथा उन्हें दमन से बचाने के या उनसे जोर जबर्दस्ती करके पैसा लेने के विरुद्ध बनाएगी।

इसकी समीक्षा करते हुए मार्शमैन (जे० सी० मार्शमैन, द हिस्ट्री ऑफ इंडिया, खण्ड II P. 35) में लिखा है कि "यह एक साहसपूर्ण तथा बुद्धिमत्तापूर्ण कदम था। किसानों ने पहली बार भूमि में काम लिया, अनुकूल वातावरण में जनसंख्या बढ़ी, उत्पादन बढ़ा," तथा जनजीवन में उत्तरोत्तर सुधार हुआ।

लेकिन आलोचकों में विशेषकर होम्स के अनुसार "स्थायी व्यवस्था एक दुखद भूल थी साधारण किसानों को इससे कोई लाभ नहीं हुआ। जमींदार निरंतर लगान देने में असफल रहे जिसके फलस्वरूप सरकार को बार बार उनकी सम्पत्ति बेचनी पड़ी।

आर्थिक लाभ —

अब राज्य की आय निश्चित हो गई। फसल की अनिश्चितता इसे प्रभावित नहीं कर सकी। लगान की बार 2 व्यवस्था करने से भी सरकार को मुक्ति मिल गई। अब कंपनी के कर्मचारी अधिक स्वतंत्रता के साथ न्याय, शासन और व्यापार आदि का काम कर सकते थे।

सबसे बड़ा लाभ तो यह था कि किसानों से वसूल करके जमींदारों द्वारा लगान दिए जाने के कारण कम्पनी की आर्थिक जड़ काफी मजबूत हो गई। जमींदारों ने कृषि कार्य में अभिरुचि दिखलानी प्रारंभ की क्योंकि कृषि के उत्पादन में वृद्धि होने से अधिकांश लाभ उन्हें ही प्राप्त था। जमींदारों को न्याय तथा शांति संस्थापन के कार्य से पृथक कर दिया गया। परिणाम स्वरूप वे कृषि के विकास में संलग्न हो गए।

इस व्यवस्था से कंपनी को राजनीतिक लाभ भी मिले। जमींदार भूमि के स्वामी बना दिए गए थे। वे प्रत्येक स्थिति में कंपनी को राजनीतिक लाभ देने लगे। इन्होंने अंग्रेजी साम्राज्य की जड़ों को मजबूत करने में मदद की।

सामाजिक दृष्टि से यह आशा की गई की अब जमींदार किसानों के सामाजिक नेता बन गए अतः वे कृषकों के

उत्थान के लिए विद्या का प्रबन्ध करेंगे और समाज सेवा में हाथ बटायेंगे।
लार्ड विलियम बैंटिक ने कहा कि कई मामलों में और कई महत्वपूर्ण बातों में असफल होने के बावजूद स्थायी बन्दोबस्त का कम-से-कम एक बहुत बड़ा फायदा है कि और वह यह कि धनी भू-स्वामियों का एक ऐसा विशाल संगठन खड़ा किया गया है जो तहे दिल से यह चाहता है कि अंग्रेजी राज बना रहे, और इसका जनता पर दबाव कायम रहे।
लेकिन बाद के वर्षों में यह शीघ्र ही उत्पीड़न और शोषण का साधन बन गई।
सरकार को भी आर्थिक नुकसान उठाना पड़ा। व्यवस्था करते समय केवल स्थायी भूमि कर का निर्धारण किया गया था, भूमि उत्पादन की भावी रकम बढ़ाने की ओर ध्यान नहीं दिया गया था। जब जंगलों को साफ कर कृषि योग्य बनाया गया तो अतिरिक्त आय जमींदारों के पास ही रही।
बंगाल में आर्थिक अवनति हुई। कृषक कृषि सुधार और उन्नति के लिए लालायित नहीं थे। वे निरंतर आतंकित रहते थे कि वे भूमि के स्वामी नहीं थे अतः सरकार के आदेश से कभी भी भूमि से बेदखल कर दिए जा सकते थे।
जमींदार गांवों से दूर रहकर विलासिता में डूब गए और इन साधनों को प्राप्त करने के लिए किसानों का शोषण प्रारंभ कर दिया।

इसके अतिरिक्त मध्यस्थ (पटवारी, कानूनगो, तहसीलदार आदि) भी कृषकों का शोषण करते लगे। जो राजस्व व्यवस्था के कारण पैदा हुए।
किसानों की कुछ की छूट इस व्यवस्था ने दी। लार्ड कार्नवालिस ने जमींदारों के साथ एक समझौता किया। उनसे उनके राजनीतिक अधिकार तो छीन लिए, किन्तु उनके बदले ऐसी जमीनों के स्वामित्व के तथा इच्छानुसार उनका लगान बढ़ाने के असीमित अधिकार दे दिए जो पहले उनके पास नहीं थे।

भारतमारों की शोषणीय व्यवस्था के कारण गाँव में ऋण लेने की प्रथा ने भी उग्र रूप धारण कर लिया। इस नई राजस्व व्यवस्था में लगान या राजस्व का बोझ इतना अधिक बढ़ गया कि किसानों को उसे चुकाने के लिए नियमित रूप से ऋण लेना पड़ता था।

कालान्तर में जमींदारों ने अपने अधिकारों का दुरुपयोग करना प्रारंभ किया। वे सरकार और किसान को ठगने लगे और सरकार उनपर नियंत्रण रखने में असमर्थ हो गई।

यह इस व्यवस्था जमींदारों के लिए भी हानिकारक हुई। कंपनी ने अनुचित तथा अधिक धन हासिल करने के लिए उनपर दबाव डालना प्रारंभ किया।

सामाजिक दृष्टि से यह व्यवस्था निंदनीय थी — ग्रामीण समाज को दो भागों में बाँट दिया गया — जमींदार वर्ग और रैयत वर्ग। इसने गाँवों में एक सामाजिक क्रांति पैदा कर दी।

निष्कर्ष के रूप में इतिहासकारों का मानना है कि यह यह मूल्यव्यवस्था दस या बीस वर्ष के पश्चात् अस्तित्व में आती तो भूमि की क्षमता का अधिक सटीक दृष्टि से मूल्य निर्धारण हो पाता और अनेक असंगतियों एवं अनियमितताओं का निराकरण हो सकता था क्योंकि तब तक कार्यान्वयन उस दौर के लिए भी सक्षम अधिकारियों को सुप्रशिक्षित कर लेता।